P: ISSN NO.: 2321-290X
E: ISSN NO.: 2349-980X
RNI : UPBIL/2013/55327
Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
Vol-II * Issue-XI*July-2015

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में कृषि एवं उद्योग व्यवस्था

जितेन्द्र सिंह
व्याख्याता,
राजनीति विज्ञान विभाग,
एम.एस.जे. कॉलेज,
भरतपुर

सारांश

कौटिल्य ने कृषि एवं उद्योग के सम्बन्ध में अपने महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किए हैं। कौटिल्य ने कृषि को विशेष प्रोत्साहन देते हुए कहा कि राजा को कृषि निश्चित समय के लिए पट्टे पर देनी चाहिए तथा किसान को अपनी उपज का कुछ हिस्सा कर के रूप में देना चाहिए। कौटिल्य ने कृषि भूमि को सिंचाई व फसल के आधार पर अनेक भागों में विभाजित किया है। वह कृषि के साथ–साथ पशु पालन व उद्योगों के महत्व पर बल देता है और कहता है कि पशु पालन पर राजकीय नियंत्रण की व्यवस्था होनी चहिये। उद्योगों को संचालित और नियमित करने के लिए सम्बन्धित उद्योगों के राजकीय विभागों की स्थापना का निर्देश दिया है और उसके लिए आवश्यक नियमों का निर्माण भी किया है।

मुख्य शब्द : पट्टेदार, बन्दोबस्त, ऊसर भूमि, शिल्पकार, कारीगर, चारागाह, उत्पादन, कर्मचारी, गौअध्यक्ष, धातु, पानालय, सुरापान, वधशाला, सीताध्यक्ष, सुराध्यक्ष।

प्रस्तावना

एक बहुआयामी चिन्तक होने के कारण कौटिल्य ने राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अपना विचार व्यक्त किया है। कौटिल्य ने कृषि एवं उद्योगों के सम्बन्ध में अपने बहुमूल्य विचार व्यक्त किये हैं। कौटिल्य के अनुसार सम्पूर्ण अधिकृत जमीन राज्य की होती थी और राजा कुछ कर के एवज में जमीन प्रजा को कृषि कार्य के लिए देता था। राजा की ओर से एक निश्चित समय के लिए किसान को जमीन पट्टे पर दिया जाता था। किसान अपनी उपज का निर्धारित हिस्सा राजा को देता था। कौटिल्य के अनुसार किसान जमीन का मालिक नहीं होता था, वह राजा का पट्टेदार के रूप में जमीन जोतता था। आमतौर पर जमीन एक ही पीढ़ी के लिए पट्टे पर दी जाती थी। दूसरी पीढ़ी के साथ जमीन फिर से बंदोवस्त की जाती थी।

आचार्य कौटिल्य ने कृषि को विशेष प्रधानता दी है। कृषि भूमि तथा गैर कृषि भूमि का बटवारा कर अधिकाधिक उत्पादन के लिए उन्होंने प्रोत्साहित किया है। जिस भूमि में अन्न आदि उत्पन्न नहीं हो सकता उसका नाम 'भूमि छिद्र' बताया है। इस प्रकार की भूमि को किस प्रकार से कृषि योग्य बनाया जा सकता है, इसका भली भाँति निरूपण कौटिल्य ने किया है[1] उनका कहना है कि जिस भूमि पर कृषि न हो सके वहॉ पर पशुओं का चारागाह आदि बनवा दिये जाने चाहिये।[2]

कृषि नीति

उस युग में कृषि राज्य की आय का प्रमुख स्त्रोत थी। कौटिल्य अर्थशास्त्र के अनुसार कृषि का अधिकांश भाग राजा के अधीन हुआ करता था। राजा अनुपजाऊ तथा ऊसर भूमि पर गांवों को बसाया करता था। समाज के लोग जितनी भूमि को अपने अधिकार में रखकर उत्पादन करते थे, उसके बदले में वे राजा को उत्पादन का 1/6 भाग कर के रूप में देते थे। कौटिल्य ने कृषि की देखभाल के लिए कृषि विभाग की स्थापना का अनुदेश दिया था, जिसके अध्यक्ष को 'सीताध्यक्ष' कहा जाता था। उसे कृषि विज्ञान, शुल्क शास्त्र, तथा वृक्ष शास्त्र की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए।[3]

सीताध्यक्षः कृषि तन्त्र वृक्षायुर्वेदज्ञस्तज्ज्ञसखो या सर्वधान्यपुष्प
फलशाक कन्दमूल वाल्क्य क्षौम कार्पासबीजानि यथाकालं गृह् णीयात्।

कौटिल्य ने सीताध्यक्ष के अलावा और भी कर्मचारियों का उल्लेख किया है। जैसे ग्वाले, सेवक, दास इत्यादि। सीताध्यक्ष के कार्यों का उल्लेख करते हुए कौटिल्य ने कहा है कि राजा की समस्त कृषि भूमि पर कृषि कार्य करना सीताध्यक्ष का कर्तव्य है।

सिंचाई एवं फसल बोने संबंधी बातें

कौटिल्य ने वर्षा को जुताई–बुवाई का मुख्य आधार माना है। उसने अलग–अलग जमीन के लिए वर्षा के पानी का अलग–अलग माप रखा है।

कौटिल्य का कहना है कि धन लगाकर स्वयं परिश्रम करके बनाये हुए तालाब आदि से हाथ से जल ढोकर खेत सींचने पर किसानों को अपनी उपज का पाँचवा हिस्सा राजा के लिए देना चाहिए। इसी प्रकार तालाबों से यदि कन्धे से पानी ढोकर सींचा जाये तो किसान अपनी उपज का चौथा हिस्सा राजा को दिया जाना चाहिए। इसी प्रकार नदी, झील, तालाब और कुओं से सिंचाई करने पर चौथा हिस्सा राजा को देने का निर्देश दिया गया है।[4]

कौटिल्य ने दो प्रकार के बांधों का उल्लेख किया है (1) सहोदक सेतु और (2) अहार्योदक सेतु। सहोदक सेतु कुओं, तालाब, नदी, झील आदि जलस्त्रोतों से तैयार किया जाता है, जबकि अहार्योदक सेतु वर्षा जल को रोक कर तैयार किया जाता है।

कौटिल्य ने कहा है कि साठी, धान, गेंहूँ, जौ, ज्वार, तिल, कांगनी, आदि को वर्षा शुरू होने के पहले ही बो देना चाहिए। मूंग, उड़द, आदि को वर्षा के मध्य में बोना चाहिए। कुसुंबी, मसूर, कुल्थी, मटर, अलसी तथा सरसों को वर्षा के अन्त में बोना चाहिए।[5]

पशुपालन

कौटिल्य ने राज्य के लिए एक पशु विभाग की स्थापना करने का अनुदेश दिया है, कौटिल्य को मान्यता है कि पशुपालन पर राजकीय नियन्त्रण ही सर्वोत्तम व्यवस्था है। पशुपालन की व्यवस्था को दखने वाला मुख्य पदाधिकारी 'गो अध्यक्ष' होता था। गोअध्यक्ष के अलावा भी अन्य कर्मचारी गोपालक, पिण्डारक, दोहक, लुब्धक, होते थे।

गायों और भैंसों को पालने वाले, दुहने वाले, उसकी रक्षा करने वाले तथा अन्य कर्मचारी गो अध्यक्ष के आदेशानुसार काम करेंगे। कौटिल्य ने गायों और भैंसों के पालन के संबंध में आठ प्रकार के उपायों का उल्लेख किया है। वे हैंः– (i) वेतनीपग्राहिक, (ii) कर प्रतिकार, (iii) भग्नोत्सृष्टक, (iv) भागनुप्रविष्टक, (v) व्रजपर्यग्र, (vi) नष्ट, (vii) विनष्ट, (viii) क्षीरघृतसज्जात।[6]

उद्योग एवं व्यापार

कौटिल्य ने राज्य के विकास के लिए कृषि एवं उद्योग दोनों को महत्वपूर्ण माना है। उसकी मान्यता है कि राज्य की समृद्धि के लिए उद्योग और व्यापार का निरन्तर–विकास होना चाहिए। काटिल्य की औद्योगिक नीति तीन प्रमुख मान्यताओं पर आधारित है, प्रथम प्रमुख उद्योगों पर राज्य का नियंत्रण होना चाहिए।

इस प्रकार के उद्योगों पर राज्य का नियंत्रण होना चाहिए। इस प्रकार के उद्योगों में राज्य द्वारा ही पूँजी, श्रम और प्रबंध किये जाते हैं। समस्त वृहत उद्योगों पर राज्य का स्वामित्व और नियन्त्रण होना चाहिए। डी.डी. कोशांबी ने कहा है कि कौटिल्य ने वृहत उद्योग के महत्व को पहचाना था। उसके पूर्व शायद ही किसी अन्य विद्वान ने वृहत उद्योग पर इतना महत्व दिया है।[7]

कौटिल्य की औद्योगिक नीति की दूसरी मान्यता है कि छोटे उद्योगों में निजी व्यक्तियों को भी स्थान दिया जाना चाहिये। इस क्षेत्र में निजी व्यक्तियों को अपने श्रम के साथ–साथ पूँजी लगाने तथा प्रबंध करने का अधिकार होना चाहिए। वस्तुतः उद्योग के क्षेत्र में निजी व्यक्तियों के स्वामित्व और प्रबंध का दायरा सीमित है। इस प्रकार क उद्योगों में शिल्पियों और कारीगरों द्वारा अपनाये जाने वाले छोटे लघु उद्योग आते हैं।

कौटिल्य की उद्योग नीति की तीसरी मूल मान्यता यह है कि मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण नहीं किया जाना चाहिए। इसी सिद्धांत को मानकर कौटिल्य ने प्रायः सभी वृहत्त उद्योगों पर राज्य के नियन्त्रण की सिफारिश की है, उसने कहा है कि किसी भी वस्तु के उत्पादन, वितरण और उपभोग पर राज्य का नियंत्रण होना चाहिए। कौटिल्य ने कहा है कि शिल्पकारों और कारीगरों की मजदूरियों का निर्धारण राज्य द्वारा होना चाहिए।[8]

खान उद्योग के अध्यक्ष एवं कर्मचारी

कौटिल्य ने खान विभाग के लिए एक अध्यक्ष नियुक्त करने का परामर्श दिया है, उसने कहा है कि खान के अध्यक्ष को धातुशास्त्र का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। उसे विभिन्न प्रकार के रसायनों तथा मणियों को पहचानने की क्षमता होनी चाहिये।[9] कौटिल्य ने खान अध्यक्ष के अलावा सहायक के रूप में और भी कई प्रकार के कर्मचारियों की नियुक्ति का परामर्श दिया है। इन कर्मचारियों को भी धातुओं, रसायनों, मणियों को पहचानने की योग्यता होनी चाहिए। कौटिल्य ने विभिन्न प्रकार की धातुओं की खानों के अलग–अलग लक्षणों का वर्णन किया है। इन लक्षणों के आधार पर सोना, चांदी, तांबा, शीशा, लोहा तथा अन्य प्रकार की धातुओं की खानों का पता लगाया जा सकता है।

खान पदार्थों के उद्योग

कौटिल्य के मतानुसार खानों से विभिन्न प्रकार के खनिज पदार्थ उत्पन्न होते हैं। इसलिए उनके उद्योगों की अलग–अलग व्यवस्था की जानी चाहिए और उनके लिए अलग–अलग अध्यक्षों की भी नियुक्ति की जानी चाहिए।

खनिज उद्योगों में लोहाकर उद्योग, सोना उद्योग, चांदी उद्योग, लवण उद्योग प्रमुख हैं। लोहाकर उद्योग में अनेक धातुओं के उद्योग सम्मिलित हैं, जैसे– तांबा, शीशा, टीन, पीतल इत्यादि। इन धातुओं को खानों से निकाल कर क्रय–विक्रय के रूप में लाने तक की जिम्मेदारी राज्य की है और इसके लिए एक लोहा अध्यक्ष नामक पदाधिकारी नियुक्त करने की अनुशंसा की है।

सोना चांदी उद्योग

खनिज पदार्थों में सोना चांदी सबसे महत्वपूर्ण है। सोने चांदी के उद्योग को संचालित करने के लिए कौटिल्य ने 'सवर्ण विभाग' की स्थापना की कहा है। सुवर्ण विभाग के अध्यक्ष को ''सुवर्णाध्यक्ष'' कहा जाता है।[10] सोना चांदी को परिस्कृत करने या उससे कई प्रकार की वस्तुओं को तैयार करने के लिए कौटिल्य ने एक 'अक्षशाला' की स्थापना की भी व्यवस्था की है।[11] कौटिल्य ने शुद्ध और उत्तम सोने तथा मिश्रित सोने के लक्षणों की भी चर्चा की है। चिकना, बाहर–भीतर एक सा दिखने वाला, कोमल और चमकदार सोने का टुकड़ा श्रेष्ठ समझा जाता है। यदि तपाने पर उसमें फर्क पड़ जाए या उस पर नीलिमा छा जाये तो उसे खोटा सोना समझना चाहिए।

''किन्जल्कवर्ण मृदु स्निग्धमनादि भ्राजिष्णु च श्रेष्ठं,
रक्तपीतकं मध्यमं, रक्तमवरं श्रेष्ठानाम्।[12]

कौटिल्य ने सोने–चांदी के आभूषणों के व्यापार के सम्बन्ध में कहा है कि 'सौवर्णिक' (राज्य का प्रधान आभूषण व्यापारी) को चाहिए कि वह नगरवासियों व जनपद वासियों के सोने–चांदी के आभूषणों का कार्य शिल्प शाला में काम करने वाले सुनारों से कराये। कौटिल्य ने सुनारों द्वारा माप और तौल की शुद्धता पर भी बल दिया है। कौटिल्य ने माप–तौल में गड़बड़ी करने वालों को दण्ड़ित करने के लिए भी कहा है।

सूत उद्योग

कौटिल्य ने सूत उद्योग को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया है। कौटिल्य ने सूत उद्योग पर राजकीय नियन्त्रण की व्यवस्था की है।[13] सूत तैयार करने तथा उससे वस्त्र एवं अनेक प्रकार के पदार्थों के निर्माण कार्य की जिम्मेदारी राज्य के सूत विभाग को सौंपी गई है। सूत विभाग के अध्यक्ष को 'सूत्राध्यक्ष' कहा जाता है।[14] कौटिल्य ने कहा कि सूत्राध्यक्ष को सूत उद्योग से संबंधित सभी बातों की जानकारी होनी चाहिए।

कताई–बुनाई तथा उससे संबंधित अन्य कार्य करने वाले कर्मचारियों को कौटिल्य ने दो श्रेणियों में बांटा है– प्रथम जो पूर्णकालिक है और पूरे समय तक सूत्रशाला में कार्य करते हैं। उन्हें नियमित वेतन भत्ते दिये जाते हैं। दूसरी श्रेणी के अन्तर्गत वे शिल्पी और कर्मचारी आते हैं जो सूत्रशाला के पूर्णकालिक कर्मचारी नहीं हैं। वो अपने घरों पर कताई–बुनाई का काम करते हैं और इसके लिए उन्हें उनके कार्यों के अनुसार मजदूरी दी जाती है।[15]

कौटिल्य ने यह स्पष्ट निर्देश दिया है कि शिल्पियों और कर्मचारियों को समय पर वेतन दिया जाना चाहिए। यदि उन्हें समय पर वेतन नहीं दिया जाता है तो सूत्राध्यक्ष को दंड दिया जाना चाहिए।

सुरा उद्योग

कौटिल्य ने मद्यपान से उत्पन्न अनेक बुराइयों को ध्यान में रखते हुए सुरा उद्योग पर राज्य के स्थायित्व और नियन्त्रण की अनुशंसा की है। सुरा के दुरूपयोग को रोकने के लिए कौटिल्य ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जिन व्यक्तियों को सुरा बनाने और उसके क्रय–विक्रय का अधिकार है, उनके अतिरिक्त जो व्यक्ति सुरा बनाता है अथवा क्रय–विक्रय करता है, उसे निर्धारित दंड दिया जायेगा।[16]

सुरा उद्योग को नियन्त्रित करने के लिए उसने एक अलग विभाग की स्थापना का निर्देश दिया है। इस विभाग के अध्यक्ष को सुराध्यक्ष कहा जाता है।

कौटिल्य ने सुरापान के लिए पानालयों की स्थापना की भो बात कही है। उसने कहा है कि राज्य को जगह–जगह पानालयों की स्थापना करनी चाहिए, जहॉ मद्यपान करने वाले लोगों के लिए सुरा पीने की समुचित व्यवस्था हो।[17] मद्यपान करने वाले लोगां को यहीं बैठकर सुरापान करना चाहिए। इन पानालयों में पर्याप्त कमरे हा तथा भोग विलास की सामग्रियाँ उपलब्ध हों। कौटिल्य ने छः प्रकार की सुरा का उल्लेख किया है– (i) मेदक, (ii) प्रसन्ना, (iii) आसव, (iv) अरिष्ट, (v) मैरेय, और (vi) मधु।[18]

कौटिल्य की दृष्टि में सुरा राज्य के राजस्व का एक प्रमुख साधन है, इसलिए उसने सुरा से सम्बन्धित शुल्क या जुर्माना वसूल करने का निर्देश दिया है। उसने कहा है कि सुराध्यक्ष को दैनिक बिक्री का तथा नाप तोल की उचित जानकारी प्राप्त कर उस पर सोलहवाँ हिस्सा और नकद आमदनी पर बीसवाँ हिस्सा कर के रूप में वसूलना चाहिए।

मांस उद्योग

मांस–उद्योग पर भी कौटिल्य ने राजकीय नियंत्रण का पावधान किया है। मांस–उद्योग को संचालित करने के लिए ''सुन्नाध्यक्ष'' नामक पदाधिकारी की नियुक्ति का निर्देश दिया है, जिसका प्रमुख कार्य नियमानुसार पशुओं का वध करवाना तथा पशुओं की व्यवस्था करना है।[19]

कौटिल्य ने पशुओं के वध के लिए वधशालाओं के निमाण की बात कही है। उसने कहा है कि इन्हीं वधशालाओं में मांस के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले पशुओं का वध किया जाना चाहिए। अन्यत्र वध किये गये पशुओं के मांस के क्रय–विक्रय को कौटिल्य ने वर्जित किया है।[20]

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि कौटिल्य ने उद्योग–धंधों पर यथेष्ठ बल दिया है। उसके अनुसार उन्नत, विकसित उद्योग व्यवस्था राज्य की समृद्धि के लिए आवश्यक है। यही कारण है कि उसने विभिन्न प्रकार के उद्योग–धंधों का उल्लेख किया है। इतना ही नहीं उद्योग धंधों को संचालित और नियमित करने के लिए संबंधित उद्यागों के राजकीय विभागों की स्थापना का निर्देश दिया है और उसके लिए आवश्यक नियमों का भी निर्माण किया है।

संदर्भ

1. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अध्याय 1, अधिकरण 2
2. अकृष्या भूमी पशुभ्यो बिवीतानि प्रयच्छेत्
– कौटिल्य अर्थशास्त्र, अध्याय 2, अधिकरण 2
3. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 24
4. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 24
5. वही
6. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 29
7. D.D.Kosambi :An Introduction to the study of Indian History, Bombay 1956, P, 208
8. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अध्याय 2, अधिकरण 4
9. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 12
10. वही
11. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 13
12. वही
13. R.P.Kangle; The KautilyaArthasastra Part-III, 1965, P-184
14. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 23
15. वही
16. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 25
17. वही
18. वही
19. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधिकरण 2, अध्याय 26
20. वही